प्रकृति के समरूप होना

24 जुलाई 2025 को कान्हा शान्तिवनम् में

पूज्य श्री चारीजी महाराज

के 98वें जन्मोत्सव के अवसर पर

प्रिय दाजी

द्वारा दिया गया संदेश।

प्रकृति के समरूप होना

प्रिय मित्रों,

उन्नति करना यानी छोड़ देना

जब हम किसी बीज को देखते हैं तब हम सत्य को प्रत्यक्ष देखते हैं। उस बीज में वह सब कुछ समाया है जिससे वृक्ष बनता है – जड़ें, तना, शाखाएँ, पत्तियाँ और फूल। लेकिन बीज को अपना वास्तविक स्वरूप बनने के लिए फूटना होगा। उसे अपने सुरक्षात्मक कवच को छोड़ना होगा। जीवन तभी शुरू होता है जब हम कुछ चीज़ों को छोड़ना सीखते हैं।

यही प्रकृति से मिलने वाली पहली सीख है – उन्नति करना यानी छोड़ देना।

मातृ वृक्ष को इसकी जानकारी होती है। जब पतझड़ का मौसम आता है तब वह अपनी पत्तियों को पकड़ कर नहीं रखती। वह उन्हें सहजता और गरिमा के साथ छोड़ देती है ताकि नई पत्तियों के लिए स्थान बन सके। हम जिस बात को अकसर भूल जाते हैं उसे वह भली-भाँति याद रखती है कि किसी भी वस्तु या स्थिति को कसकर पकड़े रखने से जीवन रुक जाता है।

माँ का हृदय भी इस बात को जानता है। नौ महीने तक माँ और गर्भस्थ शिशु के

हृदय एक साथ धड़कते हैं। फिर इस संसार में जन्म लेने का वह क्षण आता है जो प्रेमपूर्ण त्याग का सबसे सुंदर रूप होता है। माँ अपने अस्तित्व के एक अंश को मुक्त कर देती है, इसलिए नहीं कि वह उससे प्रेम नहीं करती बल्कि इसीलिए कि वह उससे बहुत अधिक प्रेम करती है। पहले केवल एक ही जीवन था लेकिन अब दो हैं और प्रत्येक सदा प्रेम कर सकता है।

प्रेम का चक्र

तीन सरल सत्य एक अंतहीन चक्र बनाते हैं –

1. उन्नति करना यानी छोड़ देना।
2. प्रेम उन्नति के माध्यम से स्वयं को प्रकट करता है।
3. प्रेम करना यानी नियंत्रण को छोड़ देना।

यह चक्र साँस लेने जैसा है। प्रत्येक क्रिया अगली क्रिया की ओर ले जाती है – साँस लेना, साँस छोड़ना और फिर से साँस लेना। जीवन की गति भी ऐसी ही है।

जब हम किसी नई चीज़ की रचना करते हैं चाहे वह कोई गीत हो, चित्रकला हो अथवा कोई सम्बन्ध तब हम प्रेम प्रकट करते हैं। सृजन करने की यह तीव्र इच्छा प्रेम की उस स्वाभाविक आवश्यकता से उत्पन्न होती है जो स्वयं को प्रकट करना और बाँटना चाहता है। यहाँ तक कि बीग बैंग में भी प्रेम ने स्वयं को अनगिनत रूपों में अभिव्यक्त किया है।

जब हम किसी नई चीज़ की रचना करते हैं चाहे वह कोई गीत हो, चित्रकला हो अथवा कोई सम्बन्ध तब हम प्रेम प्रकट करते हैं। सृजन करने की यह तीव्र इच्छा प्रेम की उस स्वाभाविक आवश्यकता से उत्पन्न होती है जो स्वयं को प्रकट करना और बाँटना चाहता है।

प्रेम से ही सब कुछ बढ़ता है। चारीजी कहा करते थे, "प्रेम इस संसार की प्रेरक-शक्ति है।"

विरोधाभास

यह एक बड़ा विरोधाभास है – किसी से वास्तव में प्रेम करने के लिए आपको उसे मुक्त करना होगा। आरम्भ में तो यह असम्भव सा लगता है। हम किसी से प्रेम करें और उसे मुक्त भी कर दें, ऐसा एक साथ कैसे हो सकता है?

लेकिन ज़रा सोचें – यदि गुलाब की कली को सुरक्षित रखने वाली परतें न खुलें तो क्या वह कभी खिल पाएगी? यदि कोया अपने रेशों को न छोड़े तो क्या तितली बाहर आ सकेगी? यदि हृदयों को मिलने के लिए निश्चित शर्तें पूरी करनी पड़ें तो क्या वे वास्तव में मिल पाएँगे?

वास्तविक प्रेम में कोई अपेक्षाएँ, माँगें या बंधन नहीं होते। यह मुक्त होता है। वास्तविक अनासक्ति उदासीनता नहीं है; बल्कि ऐसा गहन प्रेम है जो आप पर अपना हक जताकर बाँधने की बजाय आपको मुक्त कर देता है।

हम अकसर प्रेम और आसक्ति को एक समझ लेते हैं। लेकिन आसक्ति तो प्रेम का ऐसा परिधान है जो आपको भयभीत करता है। आसक्ति उसे पिंजरा बना देती है और उसे परवाह का नाम दे देती है। यह लोगों को निर्भर बनाकर उसे भक्ति का नाम दे देती है।

पौधे को अधिक जानकारी होती है। वह जानता है कि हवा उसके फूल की सुगंध को उड़ा ले जाएगी। वह जानता है कि अंततः उसके फल नीचे गिर जाएँगे। लेकिन वह विरोध नहीं करता। वह अधिक बड़ा होता जाता है। उसकी प्रकृति है – बढ़ते जाना, स्वतंत्रता देना और बीज, फल-फूल, टहनियों के रूप में अधिक जीवन की रचना करते जाना।

मानव होने की चुनौती

हम मानव अपने चयन स्वयं कर सकते हैं और अपने अस्तित्व के प्रति सजग हो सकते हैं। हालाँकि, यह अहंकार है जो हमें "मैं" और "मेरा" का भाव महसूस करवाता है जिसके कारण हम वस्तुओं को पकड़े रखते हैं और अपनी पहचान उन्हीं से बनाते हैं। विश्वास का अभाव भी हमें भविष्य की सुरक्षा के लिए उनका संचय करने को बाध्य करता है।

जब हम ध्यान करते हैं तो ये बंधन टूटने लगते हैं और हम अपने विचारों व भावनाओं के बारे में अधिक सचेत होते जाते हैं। हम यह पहचानना सीखते हैं कि क्या वास्तविक है और क्या भ्रम है, क्या शाश्वत है और क्या क्षणिक। हम अपने "निम्न स्व" यानी अहंकार के परे जाकर वस्तुओं और परिस्थितियों को अनंत के परिप्रेक्ष्य में देखना आरम्भ करते हैं।

यह परिवर्तन स्वयं में प्रेम का कार्य है।

लालाजी के जीवन से

हमारे आदिगुरु, लालाजी महाराज प्रेमपूर्ण अनासक्ति के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण थे। उदाहरण के लिए, सामूहिक ध्यान करवाते हुए जब उन्हें अपनी पुत्री के देहान्त का समाचार मिला तब वे वहीं पर चुपचाप बैठे रहे और उनकी आँखों से अश्रु की धारा बहने लगी।

उन्हें देखकर एक संततुल्य व्यक्ति ने पूछा, "एक संत रो कैसे सकता है?" संत रो सकता है क्योंकि वह परवाह करता है।

लालाजी कुछ देर तक शान्त बैठे रहे और फिर उन्होंने पास पड़े कुछ सुखे पत्तों को उठाया और मसल दिया। पत्तों से चटकने की आवाज़ आई। वे बोले, "निर्जीव सूखे पत्तों को मसलने पर उनसे भी आवाज़ आती है फिर मैं तो एक सजीव व्यक्ति हूँ। जब जुड़ा हुआ अंश अलग होता है तो रुदन स्वाभाविक है।"

हम मानव से दयालु और फिर दैवीय बनने की प्रक्रिया में हैं। जैसे-जैसे हम विकसित होते जाते हैं, वैसे-वैसे हम सृष्टि से अलग होने की बजाय उसकी सच्चाइयों के साथ एकरूप हो जाते हैं।

उन्होंने आगे कहा, “मनुष्य स्वाभाविक रूप से प्रेम, परवाह और लगाव की अनुभूति करते हैं, चाहे वे मुक्त हों या नहीं।” हम मानव से दयालु और फिर दैवीय बनने की प्रक्रिया में हैं। जैसे-जैसे हम विकसित होते जाते हैं, वैसे-वैसे हम सृष्टि से अलग होने की बजाय उसकी सच्चाइयों के साथ एकरूप हो जाते हैं।

यही प्रेमपूर्ण अनासक्ति है - गहराई से महसूस करते हुए मुक्त करना।

गलत तरीका

हमें बिना प्रेम के अनासक्त रहने के बारे में सावधान रहना चाहिए। यह भावशून्य, रूखा होता है, इसका कोई आध्यात्मिक मूल्य नहीं होता। यह ऐसा है जैसे एक व्यक्ति कहे कि वह ब्रह्मचारी है लेकिन किसी से निकटता सहन नहीं कर सकता। इस प्रकार की दूरी ज्ञानी होने से नहीं बल्कि भावनात्मक अभाव से आती है।

संपूर्ण अनासक्ति तब आती है जब प्रेम इतना गहरा होता है कि उसे खोने या पाने की कोई चिन्ता नहीं होती। ऐसा प्रेम पूर्णतया भाग लेता है लेकिन भावनात्मक निर्भरता से मुक्त रहता है। यह बिना आसक्ति के निकटता बना लेता है और बिना बंधन के सम्बन्ध।

हम इस प्रेमपूर्ण दूरी को कैसे समझ सकते हैं? मेरे पास इसका एक ही उत्तर है - समझ और अभ्यास से।

छोटे-छोटे कार्यों से शुरू करें। कोई ऐसी वस्तु को रखें जो आपके लिए बहुमूल्य हो,

जैसे कोई गहना या कोई तस्वीर। उसके लिए कृतज्ञता महसूस करें। देखें, क्या आपके भीतर उसे खो देने की चिन्ता है। अब जानबूझकर उससे सम्बन्धित आसक्ति रूपी पकड़ को छोड़ते जाएँ। इसे मुट्ठी में कसकर न पकड़ें बल्कि खुले हाथों से थामे रखें। महत्त्व देने और अधिकार जताने के बीच के अंतर को समझें।

अब सम्बन्धों को देखें। उस स्थिति पर ध्यान दें जब आप भय, आवश्यकता या अपेक्षावश सम्बन्धों को कस कर पकड़े रहते हैं। दूसरे लोगों की स्वतंत्रता का सम्मान करना सीखें। यह पीछे हटना नहीं है, यह भागना भी नहीं है बल्कि बिना शर्त के प्रेम करना है। देखें कि किस प्रकार स्वतंत्रता असली सम्बन्धों को कमज़ोर बनाने की बजाय अधिक मज़बूत बनाती है।

अंततः, इस अभ्यास का उपयोग स्वयं पर करें। देखें कि आप अपनी पहचान, बीती-बातों और यहाँ तक कि पुराने घावों को किस प्रकार पकड़े हुए हैं। अपने पुराने स्वरूपों को आदतन छोड़ते जाएँ। वे सभी बातें जो अब आपके लिए सहायक नहीं हैं उन्हें छोड़ते जाएँ, ऐसा इसलिए नहीं करना है क्योंकि आप स्वयं से घृणा करते हैं बल्कि इसलिए कि आप स्वयं से प्रेम करते हैं।

प्रकृति की उदारता की सीख

यदि आप किसी नदी के किनारे थोड़ी देर खड़े रहें तो वह आपको सब कुछ सीखा देगी। उसके पानी को बहते हुए देखें। वह न तो उन चट्टानों को पकड़े रखती है जिन्हें वह स्पर्श करती है न ही उन किनारों को जिन्हें वह पोषित करती है। नदी हर क्षण अपना सर्वस्व समर्पित करती है लेकिन वैसी ही बनी रहती है। वह अपने आप को निरंतर अर्पित करते हुए अंततः सागर में अपना शरण-स्थल पाती है।

लेकिन प्रकृति की सीख और भी गहराई में जाती है। इस बारे में सोचें - संतरे का पेड़ कभी नहीं कहता कि हर सुबह उसके फल के बदले उसे संतरे का रस चाहिए। आम का पेड़ भी आम की कीमत के रूप में आमरस नहीं माँगता। ये पेड़ सबसे साधारण वस्तुएँ लेते हैं - जैविक कचरा, पानी व सूरज का प्रकाश और उन्हें फल रूपी मीठे उपहारों में परिवर्तित कर देते हैं।

गाय जो हमें दूध देती है उसको भी कुछ नहीं चाहिए। वह दूध के बदले में दूध नहीं माँगती। वह घास, घास और केवल घास ही खाती है! लेकिन हममें से कुछ लोग उसे भी खा लेते हैं जिससे हम अपने पेट को उन जीवों की श्मशान भूमि बना देते हैं जो नि:स्वार्थ भाव से हमारी सेवा करते हैं।

हम इससे क्या सबक सीख सकते हैं? भले ही हम श्रेष्ठ गुणवत्ता वाली सभी वस्तुएँ खाते हैं लेकिन हम उनके बदले में क्या देते हैं? इस प्रश्न ने मेरे सहयोगियों को कई बार अपने कार्यों से विराम लेकर सोचने के लिए बाध्य किया है।

मैंने हमेशा ही यह माना है कि केवल दैवीय स्तर का प्रेम ही है जो – बढ़ने, प्रेम करने और स्वतंत्रता देने की इन तीन मानवीय आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है। प्रकृति प्रेम पर आधारित है – वह कुछ नहीं माँगती लेकिन सब कुछ बाँट देती है। यह प्रेमपूर्ण अनासक्ति का सर्वोच्च स्वरूप है।

प्रेमपूर्ण अनासक्ति के बारे में यही प्रकृति का मौन संदेश है जो इतना मूलभूत है कि इसे अकसर अनदेखा कर दिया जाता है।

बादल पानी एकत्रित करता है, उसके बोझ से भारी हो जाता है और फिर वह सारा पानी बरसात के रूप में छोड़ देता है। क्या ऐसा करने से वह छोटा हो जाता है? नहीं। वह परिवर्तित हो जाता है, अधिक हल्का होकर आकाश में तैरता है। वर्षा नदियों

मैंने हमेशा ही यह माना है कि केवल दैवीय स्तर का प्रेम ही है जो – बढ़ने, प्रेम करने और स्वतंत्रता देने की इन तीन मानवीय आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है। प्रकृति प्रेम पर आधारित है – वह कुछ नहीं माँगती लेकिन सब कुछ बाँट देती है। यह प्रेमपूर्ण अनासक्ति का सर्वोच्च स्वरूप है।

में परिवर्तित हो जाती है, वह बीजों को पोषित करती है और फिर यही पानी वाष्प बनकर पुन: बादल बनाता है।

आपकी साँस लेने की प्रक्रिया भी यही सिखाती है। जब आप साँस बाहर छोड़ते हैं तब आप कुछ तो त्याग देते हैं; जब आप साँस लेते हैं तब आप कुछ भीतर लेते हैं। हमेशा के लिए अपनी साँस को रोक कर रखने का प्रयास करें और तब आप पाएँगे कि आपका जीवन ही इसका विरोध करेगा। कभी-कभार जिस बात को आपका मस्तिष्क भूल जाता है उसे आपका शरीर याद रखता है - पकड़ कर रखना और छोड़ना जीवन के नृत्य के दो अंग हैं।

चौथा उसूल - प्रकृति का तरीका सरल है

"अपने जीवन को सादा बना लें ताकि वह प्रकृति से मिलजुल जाए।" - बाबूजी।

जीवन में इस सिद्धांत को अपनाना विकास का सबसे गतिशील तरीका है।

सरलता ही प्रकृति का सार है। परमतत्त्व में इसी का अस्तित्व था लेकिन अभी तक उसने पूर्ण रूप धारण नहीं किया है। यही स्वयं प्रकृति की जीवन शक्ति है, वह स्थान जहाँ से सभी गतिविधियाँ आरम्भ होती हैं जो वास्तव में मूल स्रोत है। जटिलताओं को दूर करना ही जीवन में सरलता प्राप्त करने का एकमात्र तरीका है।

लेकिन हम लोगों ने इस सरल बात को अधिक जटिल बना दिया है। हमने विचारों, इच्छाओं और कार्यों का जाल निर्मित कर दिया है जो प्रकृति के सहज प्रवाह के विपरीत कार्य करता है। एक संकाय सदस्य खुली हवा में टहलने की सलाह देता है और दूसरा सदस्य सर्दी-जुकाम से बचने की सलाह देता है। एक पैसा कमाने को कहता है तो दूसरा कोई अलग मार्ग अपनाने की सलाह देता है। बाबूजी कहते हैं कि हमने जो कुछ बनाया है, वह परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों का "संपूर्ण सम्मुच्य" है।

संतरे के वृक्ष को इन सभी परेशानियों का सामना नहीं करना पड़ता। वह फल देने या

न देने के बारे में नहीं सोचता। गाय यह नहीं सोचती कि दूध देना चाहिए या नहीं। वे प्रकृति की ही भाँति पूर्ण सरलता में जीवित रहते हैं।

हमने जिस कृत्रिम जाल को बनाया है उसे तोड़कर "उस अव्यक्त शक्ति को पुनः प्राप्त करना है जो प्रकृति का सारस्वरूप है।" यदि हम प्रकृति का अनुकरण करना चाहते हैं तो हमें अपने कार्यों को निरंतर परिष्कृत करना होगा, अवांछित कार्यों को हटाना होगा और शुद्धतम अवस्था प्राप्त करने के लिए अपने कृत्रिम जाल को तोड़ना होगा।

यही व्यावहारिक रूप में प्रेमपूर्ण अनासक्ति है। इसका अर्थ यह नहीं कि अधिक आध्यात्मिक अभ्यासों को करें; इसका अर्थ है अपने जीवन से वह सब कुछ हटाएँ जो अनावश्यक है। जिस प्रकार पतझड़ के मौसम में वृक्ष अपने पत्तों को छोड़ देता है ठीक उसी प्रकार हमें अपने सम्बन्धों, इच्छाओं, अपेक्षाओं के कृत्रिम

यदि हम प्रकृति का अनुकरण करना चाहते हैं तो हमें अपने कार्यों को निरंतर परिष्कृत करना होगा, अवांछित कार्यों को हटाना होगा और शुद्धतम अवस्था प्राप्त करने के लिए अपने कृत्रिम जाल को तोड़ना होगा।

जाल को छोड़ना होगा। हमें फिर से एक सरल जीवनशैली की ओर लौटना होगा जो स्वयं प्रकृति के साथ तालमेल में है। हम जिन कार्यों में लिप्त रहते हैं उनकी "आवश्यकता" के इस पहलू पर विचार करें।

परम सत्य

असली समस्या यही है। संतरे का वृक्ष बिना किसी प्रत्याशा के मिट्टी, पानी और सूरज के प्रकाश को मिठास में परिवर्तित कर देता है। गाय केवल घास खाती है व

उसे भोजन में बदल देती है और बदले में कोई अपेक्षा नहीं करती। वे सभी दैवीय व्यवस्था का पालन करते हैं – यानी बिना किसी सोच–विचार के बस देते रहना है।

हम, जो संसार की सबसे श्रेष्ठ वस्तुएँ ग्रहण करते हैं, अकसर इस मूलभूत नियम को ही भूल जाते हैं। हम संतरे की मिठास को लेते हैं, गाय से दूध लेते हैं और धरती की प्रचुर सम्पदा का उपभोग करते हैं, लेकिन हम वापस क्या देते हैं? इस प्रश्न से हमें नगण्यता महसूस होनी चाहिए और इसे हमें अपने वास्तविक उद्देश्य की याद दिलानी चाहिए।

बड़ी समस्या अपने आप ही चली जाती है – जब हम छोड़ते जाते हैं तब हमें अधिक मिलता है। किसी सम्बन्ध को हम जितनी अधिक स्वतंत्रता देते हैं हमारा नाता उतना ही मज़बूत बन जाता है। जब हम मुक्त कर देते हैं तभी हम उन्नति करते हैं।

यहाँ कोई योजना या रणनीति नहीं है। प्रेम इसी प्रकार कार्य करता है और दैवीय व्यवस्था का ऐसे ही संचालन होता है। प्रेम कोई बंद प्रणाली नहीं है; यह एक मुक्त प्रवाह है। यह हवा, पानी एवं प्रकाश की तरह प्रवाहित होता है जो हमेशा वापस आता है और निरंतर बदलता रहता है।

जब हम इस दैवीय व्यवस्था का पालन करते हैं और बदले में कुछ भी न पाने की अपेक्षा के देते हैं, तब हमें यह बोध होता है कि प्रेमपूर्ण अनासक्ति कोई कार्य नहीं है बल्कि वही हमारा स्वभाव है।

एक स्वीकृति

अंतत:, हम प्रेमपूर्ण अनासक्ति का अभ्यास नहीं करते; हम स्वीकारते हैं कि ऐसा हम नित्य करते हैं। हम कोई अलग–अलग जीव नहीं हैं जो एक–दूसरे से दूर हो जाने की कोशिश कर रहे हैं। जीवन निरंतर परिवर्तित हो रहा है, पुराने स्वरूप को त्याग रहा है और नए स्वरूपों में स्वयं को प्रेम कर रहा है।

आपकी प्रत्येक साँस के साथ यह ब्रह्माण्ड आपके अस्तित्व से प्रेम करता है। जब

आप एक बच्चे, एक सपने या एक क्षण को जाने देते हैं तब आप जीवन के प्रवाह के साथ सामंजस्य में होते हैं।

नदी जानती है कि वह सागर के पास लौट आएगी। बादल को मालूम है कि वह बरसेगा, फिर बरसा हुआ पानी सूखकर वापस बादल बन जाएगा। बीज को मालूम है कि उसे बढ़ने के लिए फूटना ही होगा। हम भी हृदय की गहराई में जानते हैं कि प्रेम करना यानी अनावश्यक बातों को छोड़ देना, प्रेम के साथ मुक्त करना यानी स्वयं प्रेम बन जाना है।

जब हम सरलता के इस स्तर पर पहुँचते हैं, "हमारी सभी इन्द्रियाँ विलीन हो जाने पर, पूर्व संस्कारों के मिट जाने के बाद जो शेष रह जाता है, उसके साथ एकरूप हो जाती हैं।" केवल तभी हम स्वयं को ईश्वर के साथ लय में होने एवं प्रकृति की सरल, प्रेमपूर्ण और उदार व्यवस्था के साथ पूर्ण सामंजस्य में रहने के रूप में सोच सकते हैं।

आमंत्रण

इन शब्दों को अधिक गम्भीरता से न लें। उन्हें अपना काम पूरा करने दें, फिर उन्हें जाने दें। ये याद रखने वाली बातें नहीं हैं; बल्कि ये अनवरत प्रवाह के साथ जाने के आमंत्रण हैं।

यदि आप छोड़ देने से घबराते हैं तो याद रखें कि छोड़ देना नया जीवन लेकर आता

प्रेम कोई बंद प्रणाली नहीं है; यह एक मुक्त प्रवाह है। यह हवा, पानी एवं प्रकाश की तरह प्रवाहित होता है जो हमेशा वापस आता है और निरंतर बदलता रहता है।

है, नुकसान नहीं। हर सुबह दर्शाती है कि अंत नई शुरुआतों की ओर ले जाता है। हर साँस दर्शाती है कि छोड़ने से ही ग्रहण करने के लिए स्थान बनता है।

पूरे दिल से प्रेम करें। इसलिए नहीं कि यह आध्यात्मिक है या मनोरंजक है बल्कि इसलिए कि प्रेम इसी तरह से कार्य करता है। बंद मुट्ठी केवल वस्तुओं को पकड़े रखती है। ब्रह्माण्ड खुले हाथों में है। नदी जो सिखाती है, बादल जो सिखाता है और हर एक माँ के हृदय को जो मालूम है वह यह है कि प्रेम करना यानी छोड़ देना; छोड़ देने यानी स्वतंत्र करने से हम वह प्रेम बन जाते हैं जिसकी हमें तलाश है।

बस यही शिक्षा है। आसान, पूर्ण और चिरस्थायी।

प्रेम और आदरसहित,
कमलेश

24 जुलाई 2025 को कान्हा शान्तिवनम् में
पूज्य श्री चारीजी महाराज के 98वें जन्मोत्सव के अवसर पर
दिया गया संदेश।

heartfulness
purity weaves destiny